International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 21-06-2021, Accepted: 03-07-2021, Published: 21-07-2021
Volume 7; Issue 4; 2021; Page No. 38-41

मथुरादत्त मठपाल का शब्द सामर्थ्य

कृष्ण चन्द्र[1], डॉ. गिरीश चन्द्र पन्त[2]

[1] शोधार्थी, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय रामनगर, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

[2] शोध मार्गदर्शक, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय रामनगर, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

सारांश

ज्ञातव्य है कि लोक बोलियाँ श्रुति और स्मृति परम्परा से ही जीवित रही हैं। इनकी कोई लेखन लिपि नहीं होती ऐसा जरूर हुआ कि उनके संरक्षण के नाम पर लेखन और परिनिष्ठतीकरण आरम्भ हुआ। परम्परागत रूप से मौखिक रहने वाली इन बोलियों की अपनी धरोहर है। इनकी विशिष्ट ध्वन्यात्मकता या उच्चारण क्षमता। लोककवि मथुरादत्त मठपाल की कविता में लोक बोली कुमाउनी के सभी गुण विद्यमान हैं।

मूल शब्द: ध्वन्यात्मकता, नाद सौन्दर्य, शब्द दुहराव, रूढात्मकता ।

प्रस्तावना

ज्ञातव्य है कि लोक बोलियाँ श्रुति और स्मृति परम्परा से ही जीवित रही हैं।[1] इनकी कोई लेखन लिपि नहीं होती ऐसा जरूर हुआ कि उनके संरक्षण के नाम पर लेखन और परिनिष्ठतीकरण आरम्भ हुआ। परम्परागत रूप से मौखिक रहने वाली इन बोलियों की अपनी धरोहर है। इनकी विशिष्ट ध्वन्यात्मकता या उच्चारण क्षमता। लोककवि मठपाल की कविता में लोक बोली कुमाउनी के सभी गुण विद्यमान हैं। यथा-ध्वन्यात्मकता[2]-नाद सौन्दर्य, शब्द दुहराव, रूढात्मकता इत्यादि। मठपाल जी पेशे से अध्यापक हैं, 35 साल के लम्बे शिक्षण अनुभव के साथ तीन विषयों से मास्टर ऑफ आर्ट (एम. ए.) होने के नाते उनका शब्द ज्ञान विस्तृत है। यही नहीं कवि को कुमाउनी के साथ-साथ गढ़वाली, नेपाली, अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, इत्यादि भाषाओं का ज्ञान है। साहित्य के वे गहन अध्येता रहे। इन सब कारणों से कवि मठपाल का शब्द सामर्थ्य सम्पन्न रहा है।

मठपाल जी का शब्द चयन, शब्दों का विन्यास, उनका सटीक प्रयोग, यथा स्थान दुहराव, शब्दों की ध्वन्यात्मकता, शब्द रचना, शब्दों की बनावट व बुनावट, अद्वितीय है। यदि हम इनमें से एक-एक तथ्य की गहन पड़ताल करें तो हम पाते हैं कि शब्द सामर्थ्य के मानकों पर वे खरे उतरते हैं। कवि ने अपनी लोक भाषा कुमाउनी की विशेषताओं का पूर्ण लाभ उठाया है। मुहावरे, लोकोक्तियां, पर्यायवाची, अनेकार्थक, विलोम आदि शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। कविता की बेहतरी का श्रेय उनके शब्द चयन को जाता है। ठेठ कुमाउनी के पारम्परिक शब्दों को अपनी कविता में न केवल स्थान दिया है बल्कि उनका प्रयोग भी बड़ी सटीकता से किया है। वर्तमान समय में कई लुप्त प्रायः ठेठ कुमाउनी शब्द उनकी कविता में देखने को मिलते हैं। उनकी कविता 'बौयाणि गध्यर'[3] उल्लेखनीय है-

"अल्बलुवा भौत छ य, बल्बलुवा भौत छ,/ खल्बलुवा भौत भागी
बौयाणि गध्यर य।/ उचकाई- मतकाई- डनकाई- सनकाई,/
खचोरि- खिर्दोई जस, बौयाणि गध्यर य।[4]"

उप्रयुक्त पद में 'अल्बलुवा, बल्बलुवा, खल्बलुवा, इतरूवा, छितरूवा, अफरूवा' शब्द अन्त्यानुप्रासिक ठेठ कुमाउनी शब्द हैं। वर्तमान कुमाउनी में इनका प्रयोग देखने को नहीं मिलता। कवि कुमाउनी के लुप्त प्राय संकटग्रस्त शब्दों का संरक्षण कर रहा है, अपनी कविता के माध्यम से। कुमाउनी कविता बोली की पहचान उसकी धवन्यात्मकता या नाद सौन्दर्य है[5] इस पर गौर करें कि कवि मठपाल को इसमें कितनी सफलता मिली है? इसके लिए कवि की एक लम्बी कविता 'चली रहौ गंग हो' के कुछ अंशों पर विचार करते हैं। लोकजीवन प्रकृति के बीच फलता-फूलता है। प्रकृति के तीन प्रमुख उपादान जल, जंगल, जमीन में से सदैव प्रवाहनीरा पश्चिमी रामगंगा 'रहप' का कवि वर्णन करता है- "कभैंत य खितखित, कभैत य खिचखिच,/ खिलखिल कभैत, चकानि य नार जै/ कति करीं चल चल, कति बगीं छलछल, /कलकल कति 'मनखा' कति लीं य थार जैं।।"[6] (कभी यह मन्द हँसी, कभी शरारत भरी हँसी, कभी उन्मुक्त हँसी, हँसती हुई चंचला नारी सी, कहीं चल-चल, कहीं छल-छल, कहीं कल-कल की ध्वनि करती हुई यह रामगंगा कहीं नृत्य की मुद्रा बनाती हुई, बहती है।) कविता में आए हुए खितखित, खिचखिच, खिलखिल, तीनों शब्द हँसी के लिए प्रयुक्त हुए हैं। लेकिन तीनों में अर्थ भिन्नता है खितखित का अर्थ 'मन्द हँसी', खिचखिच, का अर्थ 'शरारत भरी हँसी' और खिलखिल का अर्थ 'उन्मुक्त हँसी' होता है। ग्रीष्म ऋतु में बहती रामगंगा का वर्णन करते हुए इसी कविता के पद में कवि कहता है-

"कलकल छलछल मनखा जो बगछिया/ सणसण रूण लैरै लुझि लिगो गैंण को/ मुलुक मुलुक जाई मुल- मुल हँसि राई,/ कदु खुशी सुखनक बाँट दिया पैण जो।"[7]

इन पंक्तियों में पानी के बहने के लिए प्रयुक्त शब्द कलकल, छलछल, सणसण और हँसने के लिए प्रयुक्त 'मुल-मुल' शब्द विशिष्ट ध्वन्यात्मक हैं। 'कलकल' पानी की पत्थरों पर टकराकर आने वाली ध्वनि है। 'छलछल' छलकते हुए पानी की ध्वनि है। 'सणसण' बरसते पानी की ध्वनि और 'मुलमुल' मन्द-मन्द मुस्कुराने के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला शब्द है।

चारू चन्द्र पाण्डे मनख के शब्द सामर्थ्य के बारे में लिखते हैं- "मनख के समग्र काव्य के अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जो शब्द की शक्ति को पहचानता है वही सफल कवि है।"[8] शब्द विन्यास की बात करें तो इसके लिए कवि की चर्चित कविता 'बौयाणि गध्यर[9]' का अनुशीलन करना उचित होगा-

> "सोरि सोरि ल्यद कादौ, कोरि कोरि व्वड़ भिड़,/ टोड़ि टोड़ि नाज पात बौयाणि गध्यर य।/ उखाइ बै खुम खुन निखाई बै इन स्युन,/ बुकाइ बै डई ढुंग बौयाणि गध्यर य।"[10]

काव्य पंक्तियों में प्रयुक्त शब्दों (ल्यद-कादौ, व्बड़ भिड़, नाज-पात, खुम-खुन, इन-स्युन, डई-ढुंग, अतर-खतर, छतर-बतर, खाड़-धाड़,) का चयन फिर उनका कहीं विपरीतार्थक कहीं पूरक प्रयोग, कवि की शब्द विन्यास क्षमता का प्रमाण है। क्या केवल दो-दो शब्द साथ रख देने मात्र से कविता बन सकती है? इसका जवाब हमें कवि मठपाल की कविता में मिलता है। जहाँ वे शब्द विन्यास से उनको ऐसे क्रम में लगाते हैं कि सार्थक कविता बोलने लगती है- "काठौ' खुट/ लुऔ' कपाव/ जेठौ घाम/ पूसौ' ह्यौ/ हमर हाथौंल/ जीवन ढाव।"[11] कवि ने मात्र 12 शब्दों का प्रयोग कर उपरोक्त कविता की पंक्तियाँ गढ़ी हैं।

कवि मठपाल की कविता की पहचान शब्दों का दुहराव है। वे कविता में वांछित अभिव्यक्ति की सामर्थ्य लाने, प्रभाव क्षमता उत्पन्न करने एवं छन्द पर कविता को साधने के उपक्रम में शब्दों को दुहराते हैं। जैसे- "कदू कमौ-/ कदू खौं-/ कदू ल्यौ/ कदू लम्यौं/ कदू समेरों/ कदू हत्यौं॥"[12] यहाँ प्रत्येक पंक्ति में 'कदू' (कितना शब्द) शब्द की पुनरावृत्ति हुई है। लेकिन अलग- सन्दर्भ में। इसी प्रकार का एक और उदाहरण देखिए- "तुमरै मंच-/ तुमरै झण्ड/ तुमरी भीड़/ तुमरै डण्ड ॥"[13] इन पंक्तियों में तुम/तुमरै शब्द का दुहराव बार-बार हुआ है-

> "ग्वाँ-ग्वाँ स्वाँ-स्वाँ मनखा य गुजरणै रहौ गंग/ कानों कणि कल्यै जाछौ गुगाट-सुसाट हो /ध्वाँ-ध्वाँ भ्वाँ भ्वाँ, करि-करि,
> /फ्वाँ-फ्वाँ, ड्वाँ-ड्वाँ मचै धुरकणै रहौ गंग/ कानों कणि फाड़ि दिछौ फुफाट डुडाट हो॥"[14]

कवि द्वारा ग्वाँ-ग्वाँ, स्वाँ-स्वाँ, ध्वाँ-ध्वाँ, भ्वाँ-भ्वाँ, करि-करि, फ्वाँ-फ्वाँ ड्वाँ-ड्वाँ मचै-मचै, रहौ गंग-रहौ गंग- रहौ गंग, कानों-कानों-कानों, शब्दों की पुनरावृत्ति की है। गुगाट-सुसाट, धुधाट-भुभाँट, फुफांट-डुडाट जैसे समध्वनयात्मक शब्दों की भी पुनरावृति की गई है। मात्र 6 पंक्तियों की कविता में 8 शब्दों की दो बार आवृति दो शब्दों की तीन बार आवृति और तीन शब्दों की दो बार आवृति अखरती है।

लोक बोली का कवि होने के कारण कवि का कुमाउनी मुहावरों और लोकोक्तियों से विशेष लगाव है। ये दोनों का व्यवहार का अंग हैं इसलिए सहज ही कविता में स्थान पा गए हैं। यथा- "ख्वरां खाज लागण, सकर न बक्तरयौ, पुव पाकण, मौरूसी हैगे, द्यौ-कौ कैं चढाई, रोज्जै का खड़याई, बाट हिटनै चिचोड़ि लि जाण, क्यापक-क्याप्प कै भैटुनू, रीत जसि जणाण, रीस जसि फेड़ण, मेहल बकौला फूल, ख्वर पड़ण, कपाई फोड़ण, खन्यारि कुड़ि जस सिसूण, मैल मजी कौ बेथू, हलू खाणि बणैं हालौ, नौकरसाही मिसिरि घोई, घपोऽणौ अहोभाग, ढयड़ू बणि रौ, ज्यूनै गनेल बणि गया, निखान-निरून, भ्यासों कैं पनपूण, ठ्यक जै के लिरौ, तिति तुमड़ी ख्वर फुटण, रटन नि छोड़ण, गिचा तित पेटा रित, लट्ठ जस मारण, आलू जस झाड़ण, किल सांगौ उखाइ।"

मठपाल जी की कविता में कुमाउनी लोकोक्तियाँ भी पर्याप्त मात्रा में देखने को मिलती हैं। यथा- "गरीबै ज्वे सबूंकि भौजि, हम रोज गणै रया तुम रोज पती भयां, सौणा म्हैणक आँख गाड़ियाँ कैं रोज्जै हरियै देखियूं, दुहरा कैं झन पनपण दिंया, तू मेरि लोति खालै मैं तेरि माँसि खौल, कौण थ्वड़ा समझौण भौत, जदुक खाप उदुक बात, मैतक जदुक प्यार मलकोट जतुक दुलार, माछा अनां भितेर बटि भदू पैद हुण, अपण जंघा तोड़ि भरि चौमास तारण, बखत पट्ट बाँज बैल हैगो, सात बैणियाल् एक तिला बीं बाँटि खा, सैणि सरम वीक घरम् मैसा करम् वीक भरम्, दुहरा सितनौड़ अपण हगनौड़ बनाण, कैका रै गुद नि छिजना कैका छिर जाँही भुज, कैक लिजि गगास कैक लिजि अगास।"

कवि मठपाल की कविता में पर्यायवाची शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। उनके द्वारा लगभग समान भाव को अलग-अलग दिखाने के लिए या एक ही भाव को कई तरह से बताने के लिए पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया गया है। यथा-हँसी के लिए उनकी कविता में खितखित, खिचखिच, खिलखिल, मुलुमुलु, का प्रयोग किया गया है। चौमास की बरखा को की बूंदों के बसने के लिए बरसणि,दयौक तड़ैक, दयौक सत्रोव, पानी बरसने की आवाज के लिए छमछम, झमझम, सणसण, दणदण, पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग हुआ है। किन्तु ध्यान देने की बात यह है कि कुमाउनी में पूर्ण पर्याय बहुत कम मिलते हैं क्योंकि यहाँ की बोली में छोटे-छोटे विभेद को भी साफ देखने की प्रवृत्ति मिलती है। यथा- दुर्गंध के लिए यहाँ कई शब्द प्रचलित हैं किन्तु प्रत्येक के अर्थ में अन्तर है।

जैसे- खौंसेन= मिर्च जलने की दुर्गन्ध, जवैन=जलने की दुर्गन्ध, कचड़ैन=मुँह से आने वाली दुर्गन्ध, सितड़ैन=सीलन की दुर्गन्ध, चुरैन=पेशाब की दुर्गन्ध।

फिसलने के लिए कवि द्वारा अपनी कविताओं में रड़ऽ, सरक, खसक, शब्दों का तथा गिरने की गति के लिए लटपट-लटपट तथा घुनमुन-घुनमुन शब्दों का प्रयोग किया है। शिवजी के लिए शिवज्यू, जागनाथ, बागनाथ, गणनाथ, विसनाथ, बैजनाथ, पिन्ननाथ केदारा, चण्डेश्वर, दर्डेश्वर, मुक्तेश्वर, बिनसर, सोमेश्वर, विमानेश्वर, पिनाकेश्वर पर्यायों का प्रयोग किया है।[15]

प्रत्येक भाषा की विशेषता उसके प्रत्यय भी होते हैं। जो शब्द और के अन्त में जुड़कर उसके अर्थ में विशिष्ट परिवर्तन कर देते हैं। किन्तु

इनका स्वतन्त्र कोई अर्थ नहीं होता कवि मठपाल द्वारा अपनी कविता में कुमाउनी बोली के कई प्रमुख प्रत्ययों को स्थान दिया है। कुमाउनी में सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाले 'ऐन' प्रत्यय का प्रयोग इनकी कविता में मिलता है।

'ऐन' प्रत्यय का प्रयोग-

म्वड़+ ऐन= म्वड़ैन, पिर+ऐन = पिरैन, तित+ऐन= तितैन, खौंस+ऐन=खौसेन, खरखर+ऐन= खरखरैन, जव+ऐन= जवैन, कचड़+ऐन=कचड़ैन, सितड़+ऐन= सितड़ैन, चुर+ऐन= चुरैन।[16]

'छी' प्रत्यय का प्रयोग-

पछयाण+छी= पछयाणछी, हिगुरि+ छी= हिगुरछी, झिगुर+ छी= झिगुरछी, बांद+छी= बांदछी, बाच+छी= बांचछी, बणु+ छी= बणुछी, पड़ु+छी= पड़ूछी, मार+ छी= मारछी, पगड़+छी=पगड़छी।

'आट' प्रत्यय का प्रयोग देखिए- टकटक + आट= टकटकाट, जपजप + आट= जपजपाट, चुकचुक + आट= चुकचुकाट, हिलहिल + आट= हिलहिलाट, हिलदिल + आट= हिलदिलाट, दुरमुर + आट= दुरमुराट, घुकघुक + आट= धुकधुकाट।

'इछ' प्रत्यय का प्रयोग-कुदि+ इछ= कुदिछ, नाघि+ इछ= नाघिछ, फोड़ि+ इछ= फोड़िछ, फानि+ इछ= फानिछ, नाचि+ इछ= नाचिछ।

'नै' प्रत्यय का प्रयोग- धत्यू+ नै= धत्यूनै, गच्छयू+नै= गच्छयूनै, लुझ+ नै= लुझनै, जतू+नै= जतूनै, हिट+नै=हिटनै, खोल+ नै = खोलनै, चुन+ नै= चुननै।

उपसर्गों का कुमाउनी बोली में प्रत्यय की अपेक्षा काफी कम प्रयोग होता है इसीलिए कवि की कविता में कुमाउनी उपसर्ग अल्प ही दृष्टिगत होते हैं। उपसर्ग शब्द के आगे लगकर अर्थ में विशिष्ट परिवर्तन करते हैं। किन्तु इनका स्वतन्त्र कोई अर्थ नहीं होता।

यथा-

'निर' उपसर्ग से बनने वाले शब्द- निर्+ पंखि = निरपंखि, निर्+बंसि = निरबंसि,

'नि' उपसर्ग के उदाहरण- नि+ खान= निखान, नि+रुन= निरून, नि+छोड़ण=निछोड़ण, नि+करण= निकरण, नि+ रूंछी= निरूंछी, नि+ मैलि= निमैलि।

'अ' उपसर्ग का प्रयोग- अ+ सीस= असीस, अ+ कल= अकल, अ+ गास= अगास, अ+ फाम= अफाम।

कवि मठपाल द्वारा अपनी कविता में विरोधाभास (पैराडॉक्स) उत्पन्न करने के लिए विपरीतार्थक या विलोम शब्दों को भी अपनाया है। कवि की कविता में आने वाले विलोम शब्द अधिकांश तो क्रम से पहले वह दूसरी पंक्ति में आए हैं।

यथा- "सात न्यौ उठण'क, सात न्यौ भैटण'क"[17] में आये विलोम शब्द- उठण'क= उठने के, बैठण'क = बैठने के। "न एका सितनौड़ा' ठौर-हैंक अपण हगनौड़ बणूछी।"[18] में आये विलोम शब्द - सितनौड़ = सोने का स्थान, हगनौड़= मल त्याग करने का स्थान। "कैका लिजी गगास, कैका लिजि अगास नि हुंछी।।"[16] में गगास= एक नदी (पर्याप्त/सहज सुलभ), अगास= आकाश (अपर्याप्त/भगवान भरोसे)।

ऐसे अनेक विलोम शब्दों को कवि ने अपनी कविता में स्थान दिया है ऐसे शब्दों की जोड़े निम्नलिखित हैं –

गगास-टटास, बास-सांस, छैल-तैल, इन्सान-भगवान, निंगाई-झांझि।, देवता-प्रेत, थान-शमशान, डानी-डोली, वलघर-पलघर, आण-काथ, हंसि-आंसि, जात-भात, गौं-गाड़, ढोवण-ठड़यूंण, दीठ-भेट, पुराणि-नई, घरम्-करम् ,उठ्णक्-भेटणक्, गरीबी-मादवरी, राई-भुज, माङण-लुटण, जिकर-फिकर, लंच-डिनर, खोई-बाखई, तेरि-मेरि, सटकै-पटकै, ख्यर-ल्वड़, अधिल-पछिल, पछयाण-अपछयाण, अग्यै-पछयै, राड़-हाड़, काखक-टाड़क, नाच-गीत, मलखन-तलखन, भिड़-कनल, घर-बण, पैतोई-कपाव, हात-खुट। कुमाउनी कवि मथुरादत्त मठपाल की कविता में शब्द शक्तियों का भी भरपूर प्रयोग हुआ है। शब्द के अर्थ का बोध कराने वाली शक्ति 'शब्दशक्ति' है। अभिधा पहली शब्द शक्ति है जो प्रत्यक्ष अर्थ का बोध कराती है। हमें शब्दकोशात्मक अर्थ या रूढ़ अर्थ बताती है।[22] यथा- "जभत जाँलै/ तुमरि चुल्याण पाकी/ चुव - सिसूणों' साग/ पात पतेलों में धरि- धरि/ बाखइ भरीं/ कुड़ि कुड़ियों तक जानैं रूंछी।"[17]

लक्षणा को अर्थ का दूसरा स्तर कहते हैं जहाँ अभिधा द्वारा अर्थाभिव्यक्ति में बाधा होती है। वहाँ लक्षणा शब्द शक्ति से अर्थ ग्रहण किया जाता है। कवि मठपाल के काव्य में लक्ष्यार्थ दृष्टिगत होता है- "ऽ अच्छा, यौ बतौ गणपति ज्यू महाराज!/ कि बरसो बटि चलि रौ, बल यां जनता राज।/ हमरै ख्वरां में रोज लागि रै यसि खाज/ गणपति तुम लोग रय-न गद्दी न ताज।/ पोर बेलि बुबु बेली इज, तुम आज/ हम रोज गण रया/ तुम रोज पती भया।।"[18]

अभिधा शब्द शक्ति से अर्थ- (अच्छा यह बताओ गणपति जी महाराज सुना है बरसों से चल रखा है यहाँ जनता का राज हमारे ही सर में रोज लगी रही ऐसी खाज गणपति तुम रहे ना गद्दी ना ताज पिछले साल दादा जी कल माँ तुम आज। हम रोज गण ही रहे तुम रोज पति ही रहे। लक्षणा शब्द शक्ति के अनुसार अर्थ- (अच्छा यह बताओ नेताजी! कि सुना है देश में वर्षों से लोकतन्त्र यानी जनता का शासन चल रहा है। किन्तु हम मूर्ख तो हमेशा तुम्हें ही चुनते रहे। लोकतन्त्र के नाम पर रोज तुमने ही शासन किया बिना गद्दी और ताज के। पिछले सालों में तुम्हारे दादा जी (जवाहरलाल नेहरू) कल तुम्हारी माताजी (इंदिरा गाँधी) और आज तुम (राजीव गाँधी) हम रोज शासित ही रहे। तुम रोज शासक ही हुए। यह कैसा लोकतन्त्र है?)

उपरोक्त पद्यांश का अर्थ अभिधा शब्द शक्ति से स्पष्ट नहीं हो पा रहा है इसलिए यहाँ लक्षणा शब्द शक्ति है।

व्यंजना को व्यंगार्थ भी कहते हैं। जब अभिधा और लक्षणा शब्द शक्ति से अर्थ बाधित होता है। तो व्यंजना का सहारा लेकर अर्थ प्राप्ति की जाती है।[25] यह अर्थ का तीसरा स्तर है। कवि मठपाल की कविता में व्यंग्य और व्यंग्यार्थ दोनों पर्याप्त हैं।

यथा -"हमरि गौं- गाड़ौ' भलस्यौ/ भल विकास है रौ/ पाणि सभापति ज्यु कै मुख देखिणौ-/ गौ तौ टटास लैरौ।।"[19]

हमारे गाँव गधेरे का भले मानुसो! अच्छा विकास हो रखा है। पानी सभापति जी के मुख पर दिख रहा है बाकी सारा गाँव तो प्यासा है। यहाँ पानी सभापति के मुख पर दिख रहा है मैं अर्थ अभिधा स्पष्ट नहीं होता। लक्षणा यह बताती है कि पानी का गुण चमक प्रधान के चेहरे पर दिख रही है। लेकिन व्यंजना यह भी स्पष्ट कर देती है कि प्रधान के

चेहरे पर पानी दिखने का कारण है कि विकास योजनाओं से गाँव का विकास हो ना हो ग्राम प्रधान का विकास तो हो ही रहा है। ग्रामीण विकास की सारी चमक-दमक प्रधान के चेहरे तक ही सीमित है। कविता में व्यंजना के माध्यम से ग्राम विकास की कटु यथार्थता पर करारा व्यंग्य किया गया है।

इसी प्रकार का एक और उदाहरण देखिए-

"यो इस्कूला' मास्टरों/ छन्चर हाफ रौं/ इतवारै छुट्टी भइ सौमार साफ रौं/ और धर्मानन्द हेड सैबु कैंतौ/ हफ्त में द्वी एक दिन/ और लै माफ रौं/ सुणण में ऐरौ/ य साल हमर जिलौ/ सर्वोत्तम अनुशासनौ पुरस्कार हमरै इस्कूला पास ऐरौ।"[20]

इस स्कूल के मास्टरों का शनिवार हाफ रहता है। रविवार की छुट्टी हुई, सोमवार साफ रहता है। हेड साहब को हफ्ते में दो-एक दिन और भी माफ रहता है। सुनने में आ रखा है कि हमारे जिले का सर्वोत्तम अनुशासन का पुरस्कार हमारे स्कूल के पास आ रखा है। मास्टरों का शनिवार को साफ रहना, सोमवार माफ रहना, हेड साहब को हफ्ते मैं दो एक दिन और माफ रहना, फिर भी स्कूल को जिले का सर्वोत्तम अनुशासन पुरस्कार मिलना, अभिधा शब्द शक्ति से अर्थ और स्थिति साफ नहीं होती। लक्षणा बताती है कि स्कूल के अध्यापक शनिवार को आधे दिन तक ही विद्यालय में रहते हैं और सोमवार को विद्यालय नहीं पहुँचते। हेड मास्टर साहब हफ्ते में दो एक दिन और नहीं पहुँचते। इसके बावजूद जिले का सर्वोत्तम अनुशासन पुरस्कार विद्यालय को ही मिला है। इसके बाद के अर्थ और स्थिति को व्यंग्यार्थ स्पष्ट करता है।

व्यंजना सारी शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त कामचोरी, मक्कारी और भ्रष्टाचार की ओर संकेत करती है कि शिक्षा व्यवस्था में भी कोई सही से अपना काम नहीं कर रहा; स्कूल के अध्यापक स्कूल से भागने का मौका तलाशते हैं। अध्यापकों से बड़ा भ्रष्ट व कामचोर प्रधानाध्यापक है जो कि हफ्ते में दो-तीन दिन ही विद्यालय में मौजूद रहता है। उसके बावजूद जिले का शिक्षा प्रशासन उस विद्यालय को जिले की सर्वोत्तम पुरस्कार के लिए चुनता है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि अन्य विद्यालयों की स्थिति इस विद्यालय से और भी खराब है या इससे सर्वश्रेष्ठ विद्यालय दूसरा पूरे जिले में नहीं है। इस प्रकार व्यंजना पूरे जिले की शिक्षा व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाती है।

उपरोक्त तथ्यों के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि मथुरादत्त मठपाल की कविता शब्द सामर्थ्य कसौटी पर खरी उतरती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया, 'हिन्दी शब्द सामर्थ्य', प्रभात प्रकाशन, वर्ष 2019, पृष्ठ संख्या-11,
2. शिव नारायण चतुर्वेदी एवं तुमुन् सिंह, हिन्दी शब्द सामर्थ्य, वाणी प्रकाशन, वर्ष 2001, प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या-25,
3. डॉ. राजेंद्र यादव, शब्द और सामर्थ्य, आयुष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, वर्ष-2015,पृष्ठ संख्या- 82,
4. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-80,
5. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-20,
6. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-22,
7. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-08,
8. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-04,
9. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-79,
10. मथुरादत्त मठपाल, 'आङ् आङ् चिचैल है गो' रामगंगा प्रकाशन, पैंठ पड़ाव रामनगर, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-16,
11. मथुरादत्त मठपाल, 'मैं क्यापक क्यापक-क्याप्प कै भैटुनुं' रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर, रामनगर (नैनीताल) प्रथम संस्करण, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-(VI),
12. मथुरादत्त मठपाल, 'मैं क्यापक क्यापक-क्याप्प कै भैटुनुं' रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर, रामनगर (नैनीताल) प्रथम संस्करण, वर्ष 11, पृष्ठ संख्या-04,
13. मथुरादत्त मठपाल, 'मैं क्यापक क्यापक-क्याप्प कै भैटुनुं' रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर, रामनगर (नैनीताल) प्रथम संस्करण, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-V,VI,
14. मथुरादत्त मठपाल, 'मैं क्यापक क्यापक-क्याप्प कै भैटुनुं' रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर, रामनगर (नैनीताल) प्रथम संस्करण, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-06,
15. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-27,
16. मथुरादत्त मठपाल, 'फिर प्योंलि हँसैं', रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर रामनगर नैनीताल, उत्तराखण्ड प्रथम संस्करण वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या-26,
17. मथुरादत्त मठपाल, 'मैं क्यापक क्यापक-क्याप्प कै भैटुनुं' रामगंगा प्रकाशन, पम्पापुर, रामनगर (नैनीताल) प्रथम संस्करण, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-56,
18. मथुरादत्त मठपाल, 'आङ् आङ् चिचैल है गो' रामगंगा प्रकाशन, पैंठ पड़ाव रामनगर, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-12,
19. मथुरादत्त मठपाल, 'आङ् आङ् चिचैल है गो' रामगंगा प्रकाशन, पैंठ पड़ाव रामनगर, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-12,
20. मथुरादत्त मठपाल, 'आङ् आङ् चिचैल है गो' रामगंगा प्रकाशन, पैंठ पड़ाव रामनगर, वर्ष 1990, पृष्ठ संख्या-12,
21. http://hindigrammar.in/Word-Power.html